विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१
पोस्टल रजि. नं. NS(M)–16/84

वर्ष १३ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२७ • फाल्गुन पूर्णिमा [शक] • दि. १६–३–१९८४ • अंक ९

कथै न होई : कीयै होई ।

धर्म के तीन सोपान हैं–१. परियत्ति, २. पटिपत्ति, ३. पटिवेधन ।

परियत्ति (पर्याप्ति) याने धर्म के शास्त्रीय सैद्धांतिक पक्ष की पूरी-पूरी जानकारी । धर्मग्रन्थोंका अध्ययन करना, बहुश्रुत होना और उस पढ़े-सुने हुए धर्म को बुद्धिके स्तर पर चिंतन-मनन द्वारा भलीप्रकार समझ लेना परियत्ति कहलाता है ।

परन्तु यदि कोई व्यक्ति परियत्ति याने श्रुत ज्ञान और चिंतन ज्ञान तक ही रुका रह जाय, उसके आगे कदम न रखे तो सचमुच बड़ा अभागा है । परियत्ति ज्ञान तो पराया ज्ञान है, अपना नहीं । ऐसा व्यक्ति उस ग्वालेके समान है जो कि लोगोंकी गाएं चराने ले जाता है और शामको उनके घर लाकर बांध देता है । वह एक-एक गायका ब्योरा जानता है । काली है, सफेद है, पीली है या चितकबरी है । श्यामिन है, ब्यावल है । दूध देती है तो कौन कितने सेर दूध देती है ? सारा विवरण जानता है । परन्तु गाय परायी, गायका दूध पराया । उसे तो एक बूंद भी चखनेको नहीं मिलता ।

ऐसा व्यक्ति उस रखवालेके समान है जो सारे बागका पूरा ब्योरा जानता है । कुल कितने पेड़ हैं ? किस-किस फलके कितने-कितने पेड़ हैं ? किस-किस पेड़ पर कितने-कितने फल लगे हैं ? सब जानता है । पर पेड़ पराए, पेड़के फल पराए । वह तो केवल रखवाला मात्र है । स्वयं एक फल भी नहीं चख सकता ।

ऐसा व्यक्ति उस मजदूर के समान है जो कि अपने सिर पर बहुमूल्य वस्त्र–आभूषणोंकी संदूक उठाए चलता है । पर संदूक परायी । उसके भीतर का मालमत्ता पराया । वह उसे छू तक नहीं सकता । केवल भार ढोता है ।

यही दशा है परियत्ति धर्म तक सीमित रह जानेवाले व्यक्ति की ।

" कालेन धम्मस्सवनं " समय-समय पर धर्म का श्रवन करना मंगलदायी है और " कालेन धम्म साकच्छा " समय-समय पर धर्म की चर्चा करना मंगलदायी है । परन्तु वस्तुतः मंगलदायी तभी है जब कि उस श्रुत धर्म, चर्चित धर्म को धारण करने लगें । और यही धर्मपथ का दूसरा सोपान है जिसे पटिपत्ति (प्रतिपत्ति) याने प्रतिपादन कहा गया । धर्म का प्रतिपादन किया जाय, धर्म धारण किया जाय ।

धम्म वाणी

बहुम्पि चे सहितं भासमानो न तक्करो होति नरो पमत्तो ।
गोपो' व गावो गणयं परेसं, न भागवा सामञ्ञस्स होति ॥

धम्मपदं - १९.

कोई प्रमादी व्यक्ति भले अनेक धर्म–ग्रन्थोंका पाठ करनेवाला हो, परन्तु यदि वह उनके अनुसार आचरण नहीं करता तो परायी गौवें गिननेवाले ग्वाले जैसा ही होता है । श्रामण्य-धर्म से लाभान्वित नहीं होता ।

जब कोई व्यक्ति शील-सदाचारका जीवन जीने लगता है और इसके लिए मनको वशमें रखनेका अभ्यास करने लगता है तो पटिपत्ति धर्म आरंभ हो जाता है जो कि आशुफलदायी होता है । ऐसा व्यक्ति अपना भी भला करता है तथा औरोंका भी । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । जब-जब शील-सदाचारसे विमुख होता है तब-तब औरों की सुख-शांति भंग करता है और साथ ही साथ अपनी भी हानि करता है ।

शील-सदाचार का जीवन जीना, आत्म संयमका जीवन जीना, किसी संप्रदाय-विशेषका धर्म नहीं है । यह तो सबका धर्म है । सबके लिए समान रूपसे कल्याणकारी है । समझदार व्यक्ति धर्म के इस सार्वजनीन सर्वमांगल्यमय स्वरूपको समझकर ही उसका प्रतिपादन आरंभ करता है ।

परन्तु ऐसा करनेवाला व्यक्ति देखता है कि कदम-कदम पर कठिनाइयाँ आ रही हैं । बाहर से अधिक भीतर की कठिनाइयाँ । लंबे अतीतके स्वभावके कारण मन बार-बार विकारों से विकृत हो उठता है और सदाचारका जीवन जीनेके लिए बार-बार मनका दमन करना पड़ता है । हर दमन से भीतर ही भीतर गांठें बंधती हैं, तनाव बढ़ता है और परिणामतः व्याकुलता पैदा होती है ।

तो समझदार व्यक्ति धर्म के तीसरे सोपानकी ओर कदम उठाता है । जिसे पटिवेधन याने प्रतिवेधन कहते हैं । वह अपने चित्तके भीतरमें स्वयं अनुसंधान करना शुरू करता है । उसके बार-बार विकृत होनेवाले स्वभावके बारेमें अनुसंधान करता है । चित्त पर उत्पन्न होनेवाले विकारों के बारेमें अनुसंधान करता है । चित्त और शरीर के पारस्परिक संबंधोंको जाननेके लिए शरीरके बारेमें अनुसंधान करता है । चित्त-विकारोंके

कारण प्रभावित होती हुई शारीरिक संवेदनाओंके बारेमें अनुसंधान करता है। अनुसंधानके प्रारंभिक प्रयत्नोंमें घनीभूत सत्योंका ही सामना होता है। शरीर संबंधी सघनता और शरीर पर होनेवाली संवेदनाओंकी सघनता, चित्त और चित्तवृत्तियोंकी सघनता। यही प्रतिवेधन है जो कि स्थूल का विघटन करते-करते सूक्ष्मातिसूक्ष्म सत्य तक पहुँचाता है। शरीर, चित्त और चित्तवृत्तियोंके बारेमें अंतिम सत्यका साक्षात्कार करवाता है।

प्रतिवेधनकी इस प्रक्रियामें सहजभावसे मनके विकार दूर होने लगते हैं। मनकी गांठें खुलने लगती हैं। विविध प्रकारसे प्रतिवेधन करनेवाली विपश्यना साधना द्वारा साधक एक-एक घनीभूत कर्म-ग्रन्थियोंको धुन-धुनकर खोलता है। उसके तार-तार अलग कर लेता है तो विकार-विमुक्त हो जाता है, दुःख विमुक्त हो जाता है। अंततः शरीर और चित्त के परे जो परम सत्य है उसका भी साक्षात्कार कर लेता है। इस प्रकार धर्म की यात्रा पूरी कर मानव-जीवन सफल बना लेता है।

परियत्ति प्रतिपत्तिके लिए है। प्रतिपत्ति प्रतिवेधनके लिए है। प्रतिवेधन विकार-विमुक्तिके लिए है। धर्म का यह सार्वजनीन वैज्ञानिक पक्ष धारण करने पर ही फलदायी होता है, मंगलदायी होता है। इसकी केवल चर्चा करें, केवल श्रद्धापूर्वक श्रवण करें अथवा बुद्धिके स्तर पर चिंतन-मनन करें पर धारण न करें तो कोई लाभ नहीं होता। इस संदर्भ में कबीरके यह बोल कितने सार्थक लगते हैं।

" कथै, बदै, सुणै सब कोई।
सब कोई कहते हैं, बोलते हैं, सुनते हैं; पर
कथै न होई, कीयै होई। "

कहने से कुछ नहीं होता, जो कल्याण होता है वह करने से ही होता है।

अतः साधकों! केवल कह सुन कर न रह जांय; आओ करें! धर्म धारण करें! परियत्तिके क्षेत्र से आगे बढ़कर प्रतिपत्तिके और प्रतिवेधन के क्षेत्रोंकी ओर बढ़ें और सही मानेमें अपना कल्याण साध लें!

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

साधकोंके उद्गार

दिल्ली के प्रसिद्ध लेखक-पत्रकार श्री यशपाल जैन लिखते हैं, "अपने यशस्वी जीवनके साठ वर्ष पूर्ण करके इकसठवें वर्षमें पदार्पण करनेके शुभ अवसर पर आपको हम सबकी हार्दिक बधाई और अभिनन्दन स्वीकारें। प्रभुसे प्रार्थना है कि लोक-मंगलके लिए आपका जो अनुष्ठान चल रहा है, वह अबाधगतिसे, अनवरत, चलता रहे और आप स्वस्थ रहकर उसका अनेक वर्षों तक संचालन करते रहें।

सचमुच आपने विपश्यना द्वारा मानव जातिके लिए सच्ची शांति और सच्चे सुख का मार्ग प्रशस्त किया है। कितनी अशांति, कितनी कुण्ठा, कितनी निराशा छाई है आज दुनियामें? युद्ध की आशंकासे राष्ट्र भयभीत हो रहे हैं। संहारक अस्त्रोंकी विभीषकामें, जनसंहारकी कल्पनासे लोग कांप रहे हैं। वर्तमान अस्थिर हो, भविष्य अनिश्चित हो तो व्यक्तिके पैरोंका डगमगाना स्वाभाविक है। आपने मानवकी भंवरमें पड़ी नावको बाहर निकालनेका रास्ता दिखाया है, उसकी डगमगाती आस्थाको सुदृढ़ करनेका उपक्रम किया है और मानवके खोये विश्वासको फिर से प्राप्त करनेका हौसला दिया है।

राष्ट्रोंकी सर्वसंहारकारी रणनीति की अग्निमें धर्मों ने घी डालकर उसे और भी प्रज्वलित कर दिया है। धर्म आज संकीर्ण सम्प्रदाय बन गए हैं। उनमें आपसी संघर्ष है। उन्होंने राजनीतिकी अस्मिताको प्रोत्साहित किया है। आज धर्म-पुरुष राजनेताकी कृपाके आश्रित हो गए हैं। भारतीय संस्कृति, जिसने किसी युगमें सारे संसारको अपना कल्याणकारी संदेश दिया था, आज बिलख रही है; कला सिसक रही है। जब उनका अधिष्ठाता अपना अस्तित्व खो बैठा है तो उनकी महत्ता क्या रहेगी?

ऐसी भयावह परिस्थिति में "विपश्यना" ने आशा का नया संदेश दिया है। वह प्रभुका वरदान सिद्ध हो रही है। वह संजीवनी का काम कर रही है। मानव-जातिको यह खोई जीवन-दायिनी बूटी सुलभ करानेमें आप निमित्त बने और बन रहे हैं, इसके लिए कोटि-कोटि जन आपके सदा आभारी रहेंगे।

भगवान आपको बहुत लंबी आयु दे, आपको खूब स्वस्थ रखे और आपके हाथों इस परम उपकारी विद्याका दिन दूना, रात चौगुना प्रसार होता रहे, यही मेरी आन्तरिक कामना और प्रभु से प्रार्थना है।"

* * *

विसर्जन आश्रम, इंदौर से श्रीयुत मानवमुनि लिखते हैं, "जीवनका वास्तविक सुख एवं शांति ध्यानके द्वारा ही मनुष्यको मिल सकती है; यदि वह विपश्यना ध्यानकी पद्धतिको गहराई से समझ ले व बाह्य सभी क्रिया-कांडोंसे मुक्त हो जावे तथा साथमें विवेकके साथ श्रद्धा भी हो, विश्वास भी हो तो पूर्ण रूपेण सच्चे आनंद की अनुभूति कर सकता है। विश्व शांतिका भी यह सच्चा वैज्ञानिक मार्ग है।"

* * *

कोल्हापुरके साधक आर्कीटेक्ट श्री राजाराम बेरी लिखते हैं, "मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता होती है कि अनेक लोग विपश्यना की ओर आकर्षित हो रहे हैं और इससे लाभान्वित हो रहे हैं। अब तो कोल्हापुरमें भी काफी संख्यामें विपश्यी साधक हो गए हैं।

मेरी साधना ठीक चल रही है। अब तो यह मेरे जीवनका अंग ही बन गयी है। मैं नित्य नियमित साधना करता हूँ। पिछली जनवरीमें आपके स्वयं-शिविरमें भाग लेने आया था, इससे मुझे बहुत ही लाभ हुआ। मैं एक बार फिर शीघ्र ही किसी शिविर में आना चाहता हूँ।

इस साधनासे मेरी आंतरिक शांति बढ़ी है। किसी भी समस्या को स्पष्टतया समझ सकने की क्षमता बढ़ी है। आसपासके सभी लोगोंके प्रति प्यार का भाव बढ़ा है। यहाँ तक कि पेड़-पौधों और पर्वतों के प्रति भी।

अब धीरे-धीरे मुझे सारे शरीरमें संवेदनाएँ मिलने लगती हैं यद्यपि कुछ एक स्थानों पर संवेदनाएँ जरा दुर्बल रहती हैं। मुझे विश्वास है कि अभ्यास करते-करते यह भी स्पष्ट हो जायेंगे। विपश्यना साधनाका मार्ग तो सतत् आगे बढ़ते रहनेका ही मार्ग है कहीं रुकना है ही नहीं।

पिछले शिविरके बाद मैंने एक बात और देखी है। प्रातःकाल जब मैं नींदसे जागता हूँ तो अनायास ही सिर से पांव तक सारे शरीरमें सूक्ष्म उर्मियोंकी अनुभूति होती है। चंद मिनटोंके बाद इन उर्मियोंमें परिवर्तन आने लगता है। कोई-कोई कठोर बन जाती है, कोई मुलायम, कोई तीव्र जैसे कि रोजकी साधनाकी बैठक में होते रहता है।

अपने भीतर की सच्चाई को देखते हुए मुझे पैगम्बर मोहम्मदके यह बोल याद आ जाते हैं कि अल्लाह जब किसी बंदे पर मेहरबान होता है तो उसे इस लायक बनाता है कि वह अपने भीतर अपनी खोट स्वयं देख सके।

मेरे निम्नलिखित प्रश्नोंके उत्तर भिजवानेकी कृपा करें :—

१ प्रश्न : बहुधा बिना प्रयत्न किए ही सिर में बहुत तेज संवेदना जाग उठती है और मनको अपनी ओर खैंचने लगती है। कभी कभी तो इतनी तीव्र हो जाती है कि काम करनेमें और चिंतन करनेमें भी बाधा उत्पन्न करने लगती है। लेकिन मैं अपना काम करते रहता हूँ और समय पाकर यह स्वतः धीमी पड़ती हुई समाप्त हो जाती है। इस बारेमें आपका क्या आदेश है ?

उत्तर : यही करना चाहिए। दैनिक दिनचर्या में कामके वक्त अथवा चिंतनके वक्त कहीं कोई तेज संवेदना चलने लगे तो उसे रोकनेकी अथवा दूर करनेकी जरा भी कोशिश नहीं करनी चाहिए। उन्हें जरा भी महत्व न देकर अपने काममें लगे रहना चाहिए। समय पाकर चली ही जाती हैं। न भी जाएं तो उनके रहते हुए, बिना बाधाके काम करते रहनेका स्वभाव बन जायेगा। उनसे कोई हानि नहीं होगी।

२ प्रश्न : पिछले कोर्स के पूर्व ध्यान करते हुए कभी-कभी मेरे कंधे और कभी घुटने भी बहुत तेजीसे फड़कने लग जाते थे। कोर्स के दौरान भी कुछ दिनों तक यह क्रम चला। परन्तु मैं उस समय कंधों और घुटनोंके भीतर अधिक सूक्ष्म संवेदनाओंको देखनेका प्रयास करने लगा और शीघ्र ही उनका अनुभव भी करने लगा। क्या यह ठीक है ?

उत्तर : हाँ, यही करना चाहिए। परन्तु यदि उन स्थानों पर सूक्ष्म संवेदना महसूस न हो सके तो कुछ देर के लिए हथेली और पगथली पर होनेवाली संवेदनाओं पर मन ले जाना चाहिये। इससे लाभ होता है।

३ प्रश्न : सिरमें बहुत तीव्र संवेदना होने के कारण मैंने सिरसे पांव तक केवल एक ही ओर यात्रा करनेका अभ्यास शुरू किया था। परन्तु अब देखता हूँ कि शरीरके अनेक भागोंमें स्पष्ट संवेदना महसूस करनेके लिए दूसरी ओर भी यांने पांव से सिर तक की ओर भी मन ले जाना आवश्यक है। क्या ऐसा करूं ?

उत्तर : जब सिर पर तीव्र संवेदनाओंका उपद्रव जरा कम हो जाय, सहन करने योग्य हो जाय तब पुनः पांव से सिर तक की यात्रा भी शुरू कर देनी चाहिए।

४ प्रश्न : जब मेरे पास साधनाके लिए कम समय होता है तो मैं एक साथ दो अंगोंमें से मन गुजारता हूँ। परन्तु कभी-कभी देखता हूँ कि दोनों अंगोंमें दो प्रकारकी संवेदनाएं हो रही हैं; एक में स्थूल, एक में सूक्ष्म। क्या उस समय एक-एक अंगमें ही देखना चाहिए ?

उत्तर : एक से अधिक अंगोंका एक साथ निरीक्षण ठीक प्रकारसे तभी कर पायेंगे जब कि उन अंगोंमें एक जैसी सूक्ष्म संवेदना चल रही हो। अन्यथा यह प्रयास करना उचित नहीं। धीरजके साथ अलग-अलग अंगमें से ही मन गुजारते रहना चाहिए।

सहायक आचार्य

पिछले दो वर्ष पूर्व पूज्य गुरुजीने जिन सहायक आचार्योंकी नियुक्ति की थी उन्होंने देश-विदेश में अब तक कुल मिलाकर १३० शिविर लगाए हैं और सब जगह से सुखद एवं सफलताके ही समाचार मिले हैं। किसी-किसी सहायक आचार्यके शिविरमें १०० से २०० तक साधक सम्मिलित हुए हैं। देश और विदेश में सभी जगह शिविरोंकी मांग बढ़ रही है। इसे देखते हुए पूज्य गुरुजीने गत फरवरी महीने में कुछ और सहायक आचार्यों/आचार्याओंकी नियुक्ति की है। इनके नाम (*) इस प्रकार हैं :—

श्री रामसिंह एवं * श्रीमती जगदीशकुमारी, जयपुर (राज.)
डॉ. भीमसी गांगजी सावला एवं * श्रीमती पुष्पा सावला, भुज-कच्छ
श्री नटवरलाल पारिख एवं * श्रीमती कौशल्याबेन पारिख, बम्बई (म.रा.)
श्री लक्ष्मी नारायण राठी, पूना (म. रा.)
श्री ब्रजेन्द्रप्रसाद पालीवाल, इगतपुरी (म. रा.)
* डॉ. विट्ठलदास मोदी. गोरखपुर (उ. प्र.)
* श्री यदुकुमार सिद्धि, काठमांडू (नेपाल)
* श्री राम अवध वर्मा, बेतूल (म. प्र.)
* अनागारिका रत्नमंजरी, काठमांडू (नेपाल)
* श्रीमती डॉ. चन्द्रशीला शाक्य, कुशीनगर (उ. प्र.)
* सुश्री शांति एन. शाह, नागपुर (म. रा.)

* * *

श्री नार्म एवं श्रीमती कोलिन स्मिट्ज, अमेरिका
श्री बिल हार्ट, कनाडा
* श्री रोजर एवं श्रीमती मरग्रेडा गोसलिन, कनाडा
* डॉ. ज्यो एवं श्रीमती कैथी पोलैंड, कनाडा
श्री ग्राहम एवं श्रीमती एन गैम्बी, आस्ट्रेलिया
* श्री पैट्रिक एवं श्रीमती वर्जीनिया गिवेन-विल्सन, आस्ट्रेलिया
श्री जॉन एवं श्रीमती गेल बिआरी, (अमेरिकन), जापान
* श्री जॉन एवं श्रीमती जोआना लक्सफोर्ड, जापान
* सुश्री मेलबा गेसलैंड्स, फ्रांस
* श्रीमती वजीरा कुक, श्रीलंका
* भिक्षु ऊ जागरा, श्रीलंका

(* चिन्हित फरवरी, १९८४ में नियुक्त आचार्य/आचार्या)

विशेष सूचना

पते के साथ पोस्टल पिन कोड (डाक वितरण संख्या) होने पर पत्रिका शीघ्र एवं नियमित मिलेगी। कृपया पत्रिका पर चिपकाए आपके पते को देखें; यदि पिन कोड न हो या गलत हो तो शीघ्र लिखें ताकि सुधारा जा सके।

व्यवस्थापक, पत्रिका-विभाग.

भावी कार्यक्रम : सिद्धपुर (उ. गु.)

RS ११. १५-५-८४ से २६-५-८४ तक स. आ. श्री रामसिंहजी

संपर्क : १) सुश्री रमीलाबेन गांधी, द्वारा—योगांबलि केळवणी मंडळ देथली रोड, गणेशपुरा—३८४१५१ ता. सिद्धपुर, फोन : ३३१
२) श्री मोहनलाल केडिया, नं. २०, श्रीनाथ कृपा सोसा. भैरवनाथ रोड, मणी नगर, अहमदाबाद—३८०००८

भावी कार्यक्रम

इगतपुरी

शि. क्र.	दिनांक	संचालक
ल. शि.	११-४-८४ से १५-४-८४ तक	पू. गुरुजी (केवल पुराने साधकों के लिये)
BP १८.	१६-४-८४ से २७-४-८४ तक	स. आ. श्री पालीवाल
BP १९.	२७-४-८४ से ८-५-८४ ,,	,,
BP २०.	८-५-८४ से १९-५-८४ ,,	,,
२४७.	२०-५-८४ से ३१-५-८४ तक	पू. गुरुजी (हिन्दी)
ल. शि.	३-६-८४ से ७-६-८४ ,,	स. आ. श्री पालीवाल (केवल पुराने साधकोंके लिए)
BP २२.	७-६-८४ से १८-६-८४ ,,	स. आ. श्री पालीवाल
BP २३.	१८-६-८४ से २९-६-८४ ,,	,,
BP २४.	२९-६-८४ से ९-७-८४ ,,	,,

संपर्क :- व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी, (महाराष्ट्र) पिन : ४२२ ४०३ फोन - इगतपुरी-७६

हैदराबाद

BG-25 २९-३-८४ से ९-४-८४ तक स. आ. डॉ. सावला

संपर्क : १) - श्रीमती ऊषाबेन मेहता, १०-२-२८९/८४, शांतिनगर कालोनी, हैदराबाद-५०००२८ फोन-३०२९१

२) श्री पूरनमल अग्रवाल, C/o होटल राजधानी, सिद्दियम्बर बाजार, हैदराबाद- ५००००१ फोन-५७५७१. घर : २२४०३५

जयपुर

R.S. १०.	१-४-८४ से १२-४-८४ तक	स. आ. श्री रामसिंह
BG	१-५-८४ से १२-५-८४ तक	,, डॉ. सावला
२४८.	१९-६-८४ से ३०-६-८४ ,,	पू. गुरुजी (हिन्दी)
BP २५.	१४-७-८४ से २५-७-८४ तक	स. आ. श्री पालीवाल

शिविर स्थल एवं संपर्क : विपश्यना केंद्र, धम्मथली, सिसोदिया बाग-गलताजी रोड, जयसिंहपुरा खोर, जयपुर-३०३११८ (राज.)

स्थानीय संपर्क : श्री श्याम सुंदर मूंदड़ा
द्वारा- मे. श्याम कॉरपोरेशन, मुनोत निवास
रामलालाजी का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर-३०२ ००१
फोन-६५४१४ घर : ६३३२२

श्रावस्ती

लघु-शिविर-२९ मार्च से २ अप्रैल तक (केवल पुराने साधकोंके लिए)
सम्पर्क - श्री सुशीलकुमारजी मेहरोत्रा, डी-६२/४, डी-३/१, सोनिया रोड, वाराणसी-२२१ ०१०.

Chail
चैल (शिमला)

२४६. १७-४-८५ से २७-४-८४ तक पू. गुरुजी (हिन्दी)
शिविर स्थल- पैलेस होटल, चैल, शिमला, हिमांचल प्रदेश
संपर्क : श्री मधुसुदन मोर, C/o ग्रीन हाऊस, २ मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई-४०० ०२३
फोन नं. २९८७१३, ३१३५१०

दूहा धरम रा

पोथी पान्ना बांचकर, मुक्त हुयो ना कोय ।
ई छण का दरसन हुयां, मत्तै मुकती होय ।।
कथणो, सुणणो, बोलणो, यो ही हुयो प्रधान ।
करणो छुटग्यो मनुज को, छूट गयो कल्यान ।।
खांड खांड मुख बोलतां, जीम न मीठी होय ।
नीम नीम मुख बोलतां, जीम न खारी होय ।।
धरम स्वाद चाख्यो नहीं, गुण गाया अणमेत ।
मिनख जमारो खो दियो, अणजाण्या अणचेत ।।
चरचा ही चरचा करै, पढ पोथ्यां रो ग्यान ।
गिणै परायी गावड्यां, ग्वाळो घणो अजान ।।
बिरथा वाद-बिवाद मँह, मत खो जनम अमोल ।
जनम सफल कर लेव रै, चाख धरम रस घोल ।।

दोहे धर्म के

औषधि के गुणगान से, रोग दूर ना होय ।
जो औषधि सेवन करे, वही निरोगा होय ।।
पानी के गुणगान से, किसकी बुझती प्यास ?
बिना धरम धारण किए, कटे न जीवन त्रास ।।
कितने फल इस तरु लगे ? जाने चौकीदार ।
केवल गिनती ही गिने, फल न चखे लाचार ।।
केवल चिंतन मनन में, महज कल्पना होय ।
बिना जीभ पर गुड़ धरे, मुंह मीठा ना होय ।।
चर्चा ही चर्चा करे, धारण करे न कोय ।
धर्म बिचारा क्या करे ? सुख धारे ही होय ।।
बाहर बाहर खोजते, किसे मिला भगवान ?
अन्तर शोधन से बने, मनुज स्वयं भगवान ।।

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३. दूरभाष : ८६ ©
मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक-४२२ ००७. टेलिफोन : ८८२५१.७ वार्षिक शुल्क रु. १०/-, आजीवन शुल्क रु. १००/-

"विपश्यना" 3/84

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

पो. रजि. नं. NS(M) 16/84

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To